IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बौद्ध दर्शन और पातंजल योग दर्शन में वर्णित योग

प्रतीक सुनीलराव पाथरे शोधकर्ता डिग्री कॉलेज ऑफ फिजिकल एज्युकेशन,अमरावती, महाराष्ट्र	सुनील मधुकरराव लाबडे मार्गदर्शक डिग्री कॉलेज ऑफ फिजिकल एज्युकेशन,अमरावती, महाराष्ट्र

सारांश - भारतीय दर्शन शास्त्र में बौद्ध दर्शन को नास्तिक दर्शन के रूप में जाना जाता है। बौद्ध दर्शन को साधना पद्धति का मध्यम मार्ग भी कहा जाता है। इस दर्शन में बड़े पैमाने पर योग का अंतर्भाव दिखाई पडता है। बौद्ध दर्शन में ऐसी अनेक साधना है जो योग दर्शन से साम्य रखती है। बौद्ध दर्शन और योग दर्शन में जो समानताये है उसी को सामने लाना ही इस शोध का प्रयोजन है। नास्तिक दर्शन होने के बावजूद भी इस दर्शन में योग का प्रभाव है। इस अध्ययन के माध्यम से बौद्ध दर्शन में वर्णित योग को वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतिसे अध्ययन किया गया है। और पाया गया की यह दोनों साधना पद्धति में और उसके उपांगो में समानता पाई गई है। जैसे की जिसे पतंजलि ने कैवल्य कहा है उसे बौद्धों द्वारा निर्वाण काहा जाता है। और इस निर्वाण को प्राप्त करने की साधना भी एकजैसी है सिर्फ उसे व्यक्त करने के शब्द भिन्न पाये गये |

मुख्य शब्द- बौद्ध दर्शन,पतंजलि योग सूत्र, साधना

प्रस्तावना - विश्व भर के दर्शनों में भारतीय दर्शनशास्त्र का अपना एक अलग महत्व है। भारतीय दर्शन अपने अनोखे स्वरुप के लिए विश्व भर में जाने जाते है। जहाँ भारत के कुछ दर्शन ईश्वर की सत्ता का स्वीकार कर आस्तिक कहलाते है वही कुछ दर्शन ईश्वर की सत्ता को अस्वीकार करते है। इतनी विभिन्न स्वरुप के बावजूद भारतीय जीवन पद्धति ने सभी दर्शनों का स्वीकार किया है। बौद्ध दर्शन भी इसी दर्शन श्रृंखला के नास्तिक परंपरा का हिस्सा है। बौद्ध दर्शन के प्रवर्तक तथागत गौतम बुद्ध है। बौद्ध दर्शन यह नास्तिक दर्शन होने के बाद भी पुनर्जन्म और आत्मा जैसे तत्वों को मान्यता देता है। बौद्ध दर्शन और योग दर्शन में बड़े पैमाने में समानता पाई जाती है। साधना पद्धति की समानता योग और बौद्धों में देखने मिलती है।

श्री अविनाश कुमार टांक ने सन २००८ में हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल) उत्तराखण्ड। यहाँ पूर्ण किये बौद्ध योग एवं पातंजल योग: एक तुलनात्मक दार्शनिक अनुशीलन इस विषय के शोध प्रबंध दोनों साधना पद्धति का अध्ययन कर इन दोनों में जो भी समानता है उसे सामने रखकर दोनों साधना पद्धति एकसमान है यह निष्कर्ष निकाला[1]

बौद्ध धर्म के अनुसार - **कुशल चितैकाग्रता योगः**

अर्थात् कुशल चित्त की एकाग्रता योग है।

बौद्ध-धर्म

बौद्ध धर्म के संस्थापक भगवान बुद्ध उन्होंने स्वयम इस मार्ग का अन्वेषण कर समाधीस्थ होकर ज्ञान लाभ किया । पूर्व व्रती अनेक जन्मो के अर्जित पुण्य से अभी संस्कृत चित्तसे युक्त बोधिसत्व बाल्यावस्था से ही समाधीस्थ हो जाते थे। जन्म, रोग, जरा, मृत्यू आदिके चिंतन पूर्व संसार की अनित्यता को मानकर तीव्र विरक्ती होने पर युवावस्था मे ही उन्होने प्रवज्या ग्रहण की सत्य के अनुसंधान के मार्ग मे भगवान बुद्ध ने अलार कलाम एवं उद्रक राम पुत्र से योगविद्या प्राप्त की। परंतु उनसे उन्हे पूर्ण संतुष्टी प्राप्त नही हुई।[2] उन्होने सत्य ज्ञान के अन्वेषण क्रम मे अरुवेला पोहोचकर वाह के अरण्य मे साक्षात्कार हेतू छे वर्ष तक कठोर तपस्या की उस युग मे मन की एकाग्रता की सिद्धी के लिये कठोर तपश्चर्या ही प्रधानता थी, इस समय उन्हे अमृतत्व की प्राप्ती मे कठोर तपश्चर्या की निरर्थकता आभास हुआ

प्राचीन बौद्धिक धर्म ने ध्यानापरणीय अवशोषण अवस्था को निगमित किया।बुद्ध के प्रारंभिक उपदेशों में योग विचारों का सबसे प्राचीन निरंतर अभिव्यक्ति पाया जाता है।बुद्ध के एक प्रमुख नवीन शिक्षण यह था की ध्यानापरणीय अवशोषण को परिपूर्ण अभ्यास से संयुक्त करे। बुद्ध के उपदेश और प्राचीन ब्रह्मनिक ग्रंथों में प्रस्तुत अंतर विचित्र है। बुद्ध के अनुसार, ध्यानापरणीय अवस्था एकमात्र अंत नहीं है, उच्चतम ध्यानापरणीय स्थिती में भी मोक्ष प्राप्त नहीं होता। अपने विचार के पूर्ण विराम प्राप्त करने के बजाय, किसी प्रकार का मानसिक सक्रियता होना चाहिए:एक मुक्ति अनुभूति, ध्यान जागरूकता के अभ्यास पर आधारित होना चाहिए। बुद्ध ने मौत से मुक्ति पाने की प्राचीन ब्रह्मनिक अभिप्राय को ठुकराया.ब्रह्मिनिक योगिन को एक गैरद्विसंक्य द्रष्टृगत स्थिति जहाँ मृत्यु मे अनुभूति प्राप्त होता है, उस स्थिति को वे मुक्ति मानते है। बुद्ध ने योग के निपुण की मौत पर मुक्ति पाने की पुराने ब्रह्मिनिक अन्योक्त ("उत्तेजनाहीन होना, क्षणस्थायी होना") को एक नया अर्थ दिया; उन्हें, ऋषि जो जीवन में मुक्त है के नाम से उल्लेख किया गया था।

बुद्ध द्वारा सर्वप्रथम सारनाथ में दिये गये उपदेशों में से चार आर्यसत्य इस प्रकार हैं :-

'दुःखसमुदायनिरोधमार्गाश्चत्वारआर्यबुद्धस्याभिमतानि तत्त्वानि।' अर्थात् -

1. दुःख- संसार दुखमय है।
2. दुःखसमुदाय दर्शन- दुख उत्पन्न होने का कारण है (तृष्णा)
3. दुःखनिरोध- दुख का निवारण संभव है
4. दुःखनिरोधमार्ग- दुख निवारक मार्ग (आष्टांगिक मार्ग)

बुद्धाभिमत इन चारों तत्त्वों में से दुःखसमुदाय के अन्तर्गत द्वादशनिदान (जरामरण, जाति, भव, उपादान, तृष्णा, वेदना, स्पर्श, षडायतन, नामरूप, विज्ञान, संस्कार तथा अविद्या) तथा दुःखनिरोध के उपायों में अष्टांगमार्ग (सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीव, सम्यक् प्रयत्न, सम्यक् स्मृति तथा सम्यक् समाधि) का विशेष महत्व है। इसके अतिरिक्त पंचशील (अहिंसा, अस्तेय, सत्यभाषण, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह) तथा द्वादश आयतन (पंच ज्ञानेन्द्रियाँ, पंच कर्मेन्द्रियाँ, मन और बुद्धि), जिनसे सम्यक् कर्म करना चाहिए- भी आचार की दृष्टि से महनीय हैं। वस्तुतः चार आर्य सत्यों का विशद विवेचन ही बौद्ध दर्शन है।[3]

महर्षि पतंजलि ने भी पातंजल योग दर्शन में हेय**,** हेतु**,** हान और हानोपाय के द्वारा दुःख तथा उसे समाप्त करने की चर्चा की है।

चतुर्व्यह **–** हेय (दुःख)**,** हेयहेतु (दुःख का कारण)**,** हान (दुःख का निरोध)**,** हानोपाय (दुःख - निरोध के उपाय)

हेयं दुःखमनागतम् ।। पा)oयो0सू० 2 / 16)

तस्य हेतुरविद्या ।। पा)oयोoसू० 2/24)

:तद्भावात्संयोगाभावो हानं तद्दृशेः कैवल्यम् ।।पा योoसू० 2 / 25)

।। हानोपायः विवेकख्यातिरविप्लवा -:योoसू० 2 / 26)

चार भावना -

बौद्ध योग परम्परा म. मैत्री, करुणा, मुदिता एवं उपेक्षा ये चार भावनाएं मानी गयी है। इन्हीं को ब्रह्मविहार की संज्ञा दी गयी है। इनके सतत अनुचिन्तन एवं अभ्यास से योगी की अन्तश्चेतना एवं चित्त ब्रह्मकायिक देवा. की तरह पवित्र हो जाते है एवं मरणोपरान्त वे अस्तित्व सर्वोत्तम दैवीय क्षेणी म. पुनर्जन्म ग्रहण करते है।[6]

पातंजल योग दर्शन में भी चित्त प्रसादन के रूप में यही कहा गया है। मानुष की चित्त शुद्धि के लिये साधक ने चित्त प्रसादन का अनुसरण करना चाहिए।

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् 1.33

सुखी मनुष्यो में मित्रता की भावना करने से, दुःखी मनुष्योमें दयाकी भावना करनेसे, पुण्यात्मा पुरुषोंमें प्रसन्नाताकी भावना करने से और पापियों में उपेक्षा की भावना करने से चित्त के राग, द्वेष, घृणा , इर्षा और क्रोध आदि मलोंका नाश होकर चित्त शुद्धि निर्मल हो जाता है। अतः साधकको इसका अभ्यास करना चाहिए[7]

बौद्ध दर्शन में समाधि -

'चित्तैकाग्रतालक्षणः समाधिः।[7]

अर्थात चित्त की एकाग्रता ही समाधि है

दो प्रकार की बताई गई है।

१. रूप समाधी - किसी भी विशेष लक्ष पर चित्त को एकत्रित करना ही रूप समाधी है। इस समाधी के चार भेद होते है।

२. अरूप समाधी- जब चित्त को स्थिर होने के लिए किसी लक्ष की आवश्यकता नहीं रहती तब वह अरूप समाधि कहलाती है।

उसी प्रकार योग दर्शन में भी समाधि को दो भागो में विभक्त किया गया है। सबीज और निर्बीज रूप समाधि के चार प्रकार माने गए है। प्रथम ध्यान,द्वितीय ध्यान,तृतीय ध्यान,चतुर्थ ध्यान। जिसमे द्वितीय ध्यान में वितर्क,विचार के उपशम द्वारा चित्त की एकाग्रता बताई गई है।[8] उसी प्रकार सबीज समाधि में वितर्क,विचार,आनंद और अस्मिता यह समाधि के चार भेद बताये है[9]

आर्य अष्टांग मार्ग :

भगवान् बुद्ध ने बताया कि तृष्णा ही सभी दुःखों का मूल कारण है। तृष्णा के कारण संसार की विभिन्न वस्तुओं की ओर मनुष्य प्रवृत्त होता हैय और जब वह उन्हें प्राप्त नहीं कर सकता अथवा जब वे प्राप्त होकर भी नष्ट हो जाती हैं तब उसे दुःख होता है। तृष्णा के साथ मृत्यु प्राप्त करनेवाला प्राणी उसकी प्रेरणा से फिर भी जन्म ग्रहण करता है और संसार के दुःखचक्र में पिसता रहता है। अतः तृष्णा का सर्वथा प्रहाण करने का जो मार्ग है वही मुक्ति का मार्ग है। इसे दुःख-निरोध-गामिनी प्रतिपदा कहते हैं। भगवान् बुद्ध ने इस मार्ग के आठ अंग बताए हैं रू

सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वचन, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि।

इस मार्ग के प्रथम दो अंग प्रज्ञा के और अंतिम तीन समाधि के हैं। बीच के तीन शील के हैं। इस तरह शीलए समाधि और प्रज्ञा इन्हीं तीन में आठों अंगों का सन्निवेश हो जाता है। शील शुद्ध होने पर ही आध्यात्मिक जीवन में कोई प्रवेश पा सकता है। शुद्ध शील के आधार पर मुमुक्षु ध्यानाभ्यास कर समाधि का लाभ करता है और समाधिस्थ अवस्था में ही उसे सत्य का साक्षात्कार होता है। इसे प्रज्ञा कहते हैंए जिसके उद्बुद्ध होते ही साधक को सत्ता मात्र के अनित्यए अनाम और दुःखस्वरूप का साक्षात्कार हो जाता है। प्रज्ञा के आलोक में इसका अज्ञानांधकार नष्ट हो जाता है। इससे संसार की सारी तृष्णाएं चली जाती हैं। वीततृष्ण हो वह कहीं भी अहंकार ममकार नहीं करता और सुख दुःख के बंधन से ऊपर उठ जाता है। इस जीवन के अनंतरए तृष्णा के न होने के कारणए उसके फिर जन्म ग्रहण

करने का कोई हेतु नहीं रहता। इस प्रकारए शील-समाधि-प्रज्ञावाला मार्ग आठ अंगों में विभक्त हो आर्य आष्टांगिक मार्ग कहा जाता है।

अष्टांग योग :

महर्षि पतंजलि ने योग को श्चित्त की वृत्तियों के निरोधश *;योगः चित्तवृत्तिनिरोधः*द्ध के रूप में परिभाषित किया है। उन्होंने श्योगसूत्रश नाम से योगसूत्रों का एक संकलन किया जिसमें उन्होंने पूर्ण कल्याण तथा शारीरिकए मानसिक और आत्मिक शुद्धि के लिए **अष्टांग योग** ;आठ अंगों वाले योग) का एक मार्ग विस्तार से बताया है। अष्टांग योग को आठ अलग-अलग चरणों वाला मार्ग नहीं समझना चाहिएय यह आठ आयामों वाला मार्ग है जिसमें आठों आयामों का अभ्यास एक साथ किया जाता है। योग के ये आठ अंग हैं:

01. यम, 02. नियम, 03. आसन, 04. प्राणायाम, 05.प्रत्याहार, 06. धारणा 07. ध्यान 08. समाधि

योग और बौद्ध-धर्म के दार्शनिक सिद्धांतों में कुछ समानताएँ हैं:

- दोनों परम्पराएँ कर्म एवं पुनर्जन्म को स्वीकार करती हैं और दोनों को समस्याजनक माना जाता है।
- वास्तविकता को ग्रहण करने के हमारे अभ्यस्त मार्ग को *अविद्या* - आलम्बनों के वास्तविक स्वरुप से अनभिज्ञता - विकृत कर देती है। यही हमारे कर्म और पुनर्जन्म को प्रेरित करती है।
- यथार्थ के बारे में हमारा विकृत दृष्टिकोण *क्लेश* - अर्थात क्रोध, आसक्ति और दम्भ जैसे अशांतकारी मनोभाव - को जन्म देता है।
- इस विकृत दृष्टिकोण को *प्रज्ञा* - यथार्थ के वास्तविक स्वरुप का ज्ञान - ही समाप्त कर सकता है।
- चित्त में इस बोध को स्थिर करने के लिए हमें *समाधि* - एकाग्रचित्तता - की आवश्यकता होती है।
- *समाधि* की स्थिति तक पहुँचने के लिए हमें सबसे पहले नैतिक अनुशासन का पालन करना होता है। योग में इसे *यम* (सार्वभौमिक नैतिकता) और *नियम* (व्यक्तिगत स्तर पर नैतिकता पालन) कहा जाता है, जबकि बौद्ध धर्म में इसे *शील* (नैतिक आत्मानुशासन) कहा जाता है।
- अपने चित्त को इस प्रकार प्रशिक्षित करने से हमें *मोक्ष* - कर्म और पुनर्जन्म से मुक्ति - की प्राप्ति होती है।

निष्कर्ष- उपरोक्त सभी अध्ययन से यह निष्पादित होता है की बौद्ध दर्शन और योग दर्शन यह दोनों मनुष्य के आत्मिक उन्नति के लिए चित्त की शुद्धि महत्वपूर्ण मानते है। और चित्त के शुद्धि करने के लिए जो साधना पद्धतिया बताई वह एकजैसी देखने मिलती है। अतएव दोनों साधना पद्धतियों का अंतिम गणतव्य भी एक ही है मानवी जीवन की परमोच्चा अवस्था को प्राप्त करना, देखा जाये तो दोनों साधना पद्धतियों में बोहोत साम्य दिखाई देता है। इसी समानता की वजह से दोनों साधना पद्धतिया एक दूसरे के पूरक है या एक दूसरे पर आधारित है यह भी कहाँ जा सकता है। और बौद्ध दर्शन में भी बड़े पैमाने पर योग का अंतर्भाव दिखाई देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/22947
2. बुद्ध चरित्र,83 बौद्धसंग्रह, पृ 30
3.https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AC%E0%A5%8C%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%A7_%E0%A4%A6%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%B6%E0%A4%A8
4) बौ.सा.द., पृ. 42
5) बोधिचर्यावतार ८/४
6) पांडेय राजकुमारी(1993)'भारतीय योग परंपराके विभिन्न आयाम', राधा पब्लिकेशन,नई दिल्ली , पृ २५८
7) पा.यो.सू- 1/17

8) https://studybuddhism.com/hi/unnata-adhyayana/itihasa-aura-samskrriti/vibhinna-dharmom-ke-bicha-samvada/yoga-evam-bauddha-dharmi-sadhana-ko-milana

9) डॉ कुमार कामाख्या (२०११),'योग महाविज्ञान',स्टैण्डर्ड पब्लिकेशन